**ओ३म्**

**‘जिसका जन्म उसकी मृत्यु और जिसकी मृत्यु उसका जन्म होना अटल है’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है कि जिसका जन्म होता है उसकी मृत्यु ध्रुव अर्थात् अटल है और जिसकी मृत्यु होती है उसका पुनर्जन्म वा जन्म होना भी ध्रुव सत्य है। हम अपने जीवन में यदाकदा अपने परिचितों व अपरिचितों की मृत्यु का समाचार सुनते रहते हैं। जिस व्यक्ति से हमारा सम्पर्क व सम्बन्ध होता है उसकी मृत्यु का समाचार सुनकर हमें दुःख होता है। विगत दो दिन में आर्यसमाज से सम्बन्धित हमारे तीन परिचित बन्धुओं की मृत्यु हुई है। इसके अतिरिक्त हमने जिस विभाग में कार्य किया वहां के तीन सेवानिवृत व्यक्तियों की भी विगत लगभग 11 दिनों में मृत्यु हुई है। शास्त्रों में मृत्यु को अभिनिवेश क्लेश कहा गया है। यह मृत्यु व इसका समाचार सभी के लिए दुःखदायी होता है। इस दुःख में कुछ रहस्य छिपा हुआ हो सकता है। पहला सन्देश तो यह लगता है कि अन्यों की मृत्यु हमें अपने बारे में सोचने का संकेत करती है। यह बताती है कि एक दिन हमें भी मरना है। यह हमें सावधान करती है कि हम सोच विचार कर भविष्य में होने वाली अपनी मृत्यु का निवारण करें। यही मुख्य सन्देश हमें मृत्यु का प्रतीत होता है।

क्या मृत्यु का निवारण हो सकता है? इसका उत्तर यह है कि सदा के लिए तो नहीं अपितु कुछ समय के लिए मृत्यु को कुछ पीछे धकेला जा सकता है। यदि हम अपनी दिनचर्या जिसमें हमारा भोजन, व्यायाम, आसन, प्राणायाम, ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना उपासना सम्मिलित है, उन पर ध्यान दें तो निश्चय ही हम मृत्यु के समय को कुछ आगे बढ़ा सकते हैं। ऐसा करके व साथ हि मृत्यु के बारे में अधिक से अधिक वैदिक विचारों का ज्ञान व रहस्यों को जानकर तथा ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना से हम सामान्य लोगों को होने वाले मृत्यु के भय से अभय ना सही, भय को कुछ कम तो कर ही सकते हैं। अतः मृत्यु की उपेक्षा न करके इसके विषय में यथार्थ ज्ञान को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील होना चाहिये। हमारा विचार है कि यह कठिन कार्य नहीं है। महर्षि दयानन्द ने इस कार्य को सरल कर दिया है। उन्होंने अपने लिए मृत्यु की जिस ओषधि को खोजा था व जिससे वह अभय बने थे, उसे उन्होंने समाज व देश के सभी लोगों के कल्याण के लिए वितरित व प्रचारित किया था।

वह ओषधि जानने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि हम शरीर नहीं अपितु एक चेतन सत्ता **‘जीवात्मा’** हैं। चेतन पदार्थ में ज्ञान व कर्म, यह दो गुण स्वभाविकः होते हैं। ईश्वर भी चेतन सत्ता है, अतः उसमें भी ज्ञान व क्रिया अनादि काल से विद्यमान है। सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी व सूक्ष्मतम होने सहित वह सर्वज्ञ भी है। जीवात्मा एकदेशी व सूक्ष्म सत्ता है परन्तु ईश्वर जीवात्मा से भी सूक्ष्म वा सूक्ष्मतम है। हमारी आत्मा वा जीवात्मा एकदेशी होने से अल्पज्ञ है और ईश्वर सर्वव्यापक होने सर्वज्ञ है। हमें अपनी आत्मा विषयक ज्ञान या तो सीधा ईश्वर से समाधि अवस्था में वा वेदों के अध्ययन से प्राप्त होता है। वेदों का अध्ययन कर हम ईश्वर व आत्मा का ज्ञान प्राप्त कर अपनी बौद्धिक व आत्मिक उन्नति कर सकते हैं। ईश्वर की बनाई सृष्टि को देखकर व समझकर तथा पदार्थों के गुणों को तर्क की कसौटी पर कस कर भी कुछ कुछ ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। हमने विज्ञान का बहुत अधिक तो नहीं परन्तु कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त किया है। अध्यात्म के ग्रन्थों को भी पढ़ा है। इससे हमें जीवात्मा व ईश्वर के विषय को जानने व समझने में सहायता मिली है। जीवात्मा अनादि, अजन्मा, अनुत्पन्न, अल्पज्ञ, चेतन, सूक्ष्म अणु के समान वा बिन्दूवत, ईश्वर की कृपा से मनुष्य आदि जन्मों को प्राप्त कर कर्म करने में स्वतन्त्र व उसके सुख-दुःख रूपी फलों को भोगने में परतन्त्र है। अशुभ व बुरे कर्म को छोड़कर केवल निष्काम शुभकर्मों को करके जिसमें ईश्वरोपासना सहित अग्निहोत्र, सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय, माता-पिता-आचार्य-विद्वानों-संन्यासी आदि अतिथियों की सेवा-सत्कार सहित परोपकार वा दान आदि कार्य सम्मिलित हैं, मनुष्य कर्म-फल के बन्धनों से मुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। मोक्ष दुःखों की पूर्णतया वा सर्वथा निवृत्ति, जन्म व मरण से मुक्ति व ईश्वर के सान्निध्य में आनन्द को भोगने की स्थिति को कहते हैं। मोक्ष में मुक्त जीवात्मा सर्वव्यापक व सर्वत्र आनन्द से परिपूर्ण ईश्वर में विचरती है और ईश्वर के आनन्द का भोग करती हैं। यह ऐसा ही है कि किसी योग्यतम व्यक्ति को उसकी इच्छा की सभी वस्तुयें सुलभ कराना। इन बातों को जान लेने पर मनुष्य का मृत्यु का भय कम वा समाप्त प्रायः हो जाता है। मृत्यु के भय की ओषधि सद्ज्ञान ही है जो महर्षि दयानन्द ने प्राप्त किया था और उससे उन्होंने मृत्यु के भय पर विजय प्राप्त की थी। यह समस्त ज्ञान उन्होंने सत्यार्थप्रकाश सहित अपने सभी ग्रन्थों में प्रस्तुत किया है जो सभी के जानने योग्य है।

ईश्वरोपासना के सन्दर्भ में महर्षि दयानन्द ने लिखा है कि ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना से जीवात्मा के अविद्या-प्रधान काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि मल छंटते वा नष्ट प्रायः होते हैं और जीवात्मा के गुण ईश्वर के गुण, कर्म व स्वभाव के अनुरूप होते जाते हैं। जिस प्रकार अग्नि की संगति होने पर शीत का निवारण होता है और जैसे ताप से आतुर पुरूष का ताप जल में स्नान कर दूर होता है उसी प्रकार से ईश्वरोपासना से मनुष्य के बुरे गुण-कर्म-स्वभाव छूट कर ईश्वर के गुणों के अनुरूप होते जाते हैं। इतना ही नहीं अपितु जीवात्मा का बल इतना बढ़ता है कि पहाड़ के समान मृत्यु आदि भयंकर दुःखों को प्राप्त होने पर भी मनुष्य घबराता नहीं है। क्या यह छोटी बात है? अतः मृत्यु के भय से मुक्त होने वा उस पर विजय प्राप्त करने के लिए मनुष्यों को वैदिक ग्रन्थों के स्वाध्याय सहित वैदिक विधि से ही ईश्वरोपासना व यज्ञ आदि कार्य करने चाहिये जिनसे इच्छित परिणाम प्राप्त हो सकते हैं।

जब हम संसार की आदि से अब तक जन्म लेने व मृत्यु को प्राप्त होने वाले मनुष्यों पर विचार करते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि सृष्टि की आदि से अब तक खरबों लोग उत्पन्न हुए व मरे, यहां तक की श्री राम व श्री कृष्ण, हनुमान जी व अर्जुन के समान महावीर व योद्धा तथा कोटिशः ऋषि व मुनि हुए परन्तु कोई भी अपने आप को मृत्यु के पाशों से मुक्त नहीं रख सका, तो यह विदित व सिद्ध हो जाता है कि हम सभी को कुछ समय बाद संसार से निश्चय ही जाना है। मृत्यु होनी है, यह तो जन्म के समय ही निश्चित हो जाता है, बस वर्ष, महीने व दिन की जानकारी हमारे पास नहीं होती। यह आज, अगले क्षण व कालान्तर में कभी भी हो सकती है। काल का निश्चय न होने के कारण ही शास्त्रकारों ने कहा है कि हमें मनुष्य जीवन में जो काम करने हैं उसे शीघ्रतम कर लेना चाहिये। हमारे इन प्राणों का कोई भरोसा नहीं की कब यह साथ छोड़ दें। अनेक कामों में मुख्य काम ईश्वर, आत्मा व संसार को जानना, अपनी आत्मा के मलों को दूर करना व शुभ संस्कारों से आत्मा को उन्नत करना है। जितनी जल्दी यह काम पूरा होगा उतना ही शीघ्र इससे हमारे वर्तमान व भविष्य के जीवन में दुःखों की निवृति व सुख लाभ होगा। अतः लक्ष्य की प्राप्ति में लग जाना ही उचित है।

लेख को अधिक विस्तार न देते हुए गीता के दूसरे अध्याय के 22, 23 तथा 27 वें श्लोकों को प्रस्तुत कर रहे हैं जिसमें आत्मा व मृत्यु के सम्बन्ध में अनमोल विचार उपलब्ध हैं। **‘वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृहणाति नरोऽपराणि। तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही।।22।।’, ‘नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः। न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।।23।।’, तथा ‘जातस्य हि ध्रुवो मृत्युध्रुवं जन्म मृतस्य च। तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि।।27।।’** इनका अर्थ है कि **मनुष्य जैसे पुराने वस्त्रों को छोड़कर नये वस्त्र धारण कर लेता है वैसे ही आत्मा पुराने शरीर को छोड़कर दूसरे नये शरीर में चली जाती है। शस्त्र इस आत्मा को काट नहीं सकते, अग्नि इसको जला नहीं सकती, जल इसको गीला नहीं कर सकता और वायु इसको सुखा नहीं सकती अर्थात् प्रत्येक स्थिति में यह आत्मा अपरिवर्तनीय रहती है। पैदा हुए मनुष्य की मृत्यु अवश्य होगी और मरे हुए मनुष्य का जन्म अवश्य ही होगा। इस जन्म व मरण रूपी परिवर्तन के प्रवाह का निवारण नहीं हो सकता। अतः जन्म व मृत्यु होने पर मनुष्य को हर्ष व शोक नहीं करना चाहिये। गीता के इन श्लोकों में जो दर्शन दिया गया है वह जन्म व मृत्यु की यथार्थ स्थिति को प्रस्तुत कर रहा है।**

जीवात्मा व इसके जन्म व मृत्यु विषयक रहस्यों को जानकर मनुष्यों को मृत्यु के दुःख से यथासम्भव निवृत होना चाहिये। मृत्यु, जो कि सत्य है, होनी ही है, जिसे कोई टाल व बदल नहीं सकता, उसको यथार्थ रूप में जानकर शोक व दुःख से मुक्त होना ही किसी विवेकी पुरुष की सफलता है। हम आशा करते हैं कि पाठक लेख में प्रस्तुत आत्मा व मृत्यु विषयक विचारों को पढ़कर लाभान्वित होंगे।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**